Leadership, Education, Personality: An Interdisciplinary Journal ISSN: 2524-6178
www.sibe.rpress.co.in, Vol. 15, Issue 12 December 2020, UGC CARE 1

महर्षि वेदव्यास के अनुसार मनुष्यों के लिए आचार धर्म : यक्ष-युधिष्ठिर वार्ता के परिप्रेक्ष्य में

डॉ. श्याम कुमार झा
सहाचार्य, संस्कृत विभाग
महात्मा गाँधी केन्द्रीय विश्वविद्यालय,मोतिहारी, बिहार

महर्षि वेदव्यास द्वारा रचित महाभारत में आचार - विचार के साथ-साथ मनुष्यों के कर्तव्यों के बारे में विस्तृत वर्णन प्रस्तुत किया गया है। महाभारत के तीन नाम हैं- जय,भारत और महाभारत। इसे भारतीय संस्कृति का ज्ञानकोष भी कहा जाता है। महाभारत में लगभग एक लाख श्लोक हैं। इन श्लोकों में विभिन्न कथा-आख्यानों के माध्यम से जीवन में ग्रहणीय और करणीय कार्यों पर प्रकाश डाला गया है। उन्हीं में से एक महत्तवपूर्ण ज्ञानप्रद प्रसङ्ग है - यक्ष-युधिष्ठिर वार्ता।

महाभारत के वन पर्व के 313वें अध्याय में यक्ष और युधिष्ठिर के प्रश्नोत्तर का प्रसिद्ध प्रसङ्ग है। यक्ष एक सरोवर की रक्षा कर रहा होता है, जो युधिष्ठिर के चारों भाइयों को जल पीने से पहले रोकता है। परन्तु उसके आदेश की अवहेलना करने पर यक्ष अपनी दिव्य शक्तियों से उन्हें मृतप्राय कर देता है। जब युधिष्ठिर अपने भाइयों की खोज में वहाँ पहुँचते हैं, तो यक्ष उनके समक्ष प्रकट होकर कुछ प्रश्नों के उत्तर देने का आग्रह करता है। युधिष्ठिर, चारों भाइयों को मृत देख कर भी न क्रोधित होते हैं, न विचलित। अत्यन्त धैर्य और संयम से यक्ष की चुनौती को स्वीकार करते हुए उसके द्वारा पूछे गए प्रश्नों का उत्तर देते हैं। इन प्रश्नों की महत्ता केवल यक्ष और युधिष्ठिर के मध्य वार्तालाप तक सीमित नहीं है, बल्कि महर्षि वेदव्यास द्वारा रचित महाभारत के माध्यम से यह संवाद समस्त मानव जाति के आचारधर्म और कर्तव्यों से संबंधित गूढ़ विषयों की प्रस्तुति है, जिसे हर व्यक्ति को समझना और मनन करना चाहिए। संस्कृत भाषा, जो लघु शब्दों में भी व्यापक और गम्भीर अर्थ को अभिव्यक्त करने की सामर्थ्य रखती है, इस वार्ता प्रसङ्ग में अपने वैशिष्ट्य का सशक्त प्रमाण प्रस्तुत करती है।

महाभारत केवल कौरवों और पाण्डवों के मध्य हुए युद्ध का वर्णन मात्र नहीं है, बल्कि यह सम्पूर्ण भारतवर्ष की संस्कृति, लोकरीति, आचार, कर्तव्य-पालन तथा जीवन जीने की आदर्श पद्धति का नियामक ग्रन्थ है। इससे प्रेरित होकर अनेक कवियों और विद्वानों ने मानवता के कल्याण के लिए अपनी रचनाओं के माध्यम से समाज को दिशा देने का कार्य किया है। इसी कड़ी में यक्ष और युधिष्ठिर के बीच हुए प्रश्नोत्तर को भी देखना चाहिए, जहाँ जीवन के प्रत्येक गम्भीर और अनसुलझे प्रश्नों का उत्तर अत्यन्त सारगर्भित और सटीक शब्दों में प्रश्नोत्तर शैली में दिया गया है। ये प्रश्नोत्तर केवल किसी एक युग या व्यक्ति के लिए प्रासंगिक नहीं हैं, अपितु सभी युगों और समस्त मानव समाज के लिए पथप्रदर्शक है।

युधिष्ठिर अपने भाइयों की अवस्था देख सोच ही रहे थे कि किसने हमारे भाइयों की ये दशा की है, इसी बीच यक्ष उनसे पूछता है। हे नरपति ! पहले मेरे प्रश्नों का उत्तर दो फिर जल पीओ। यक्ष का पहला प्रश्न -

"**हे राजन**! **समस्त प्राणियों में अतिथि कौन है**? **सनातन धर्म क्या है**? **अमृत किसे कहते हैं**?"

कोऽतिथिः सर्वभूतानां किंस्विद् धर्मं सनातनम्।

अमृतं किंस्विद् राजेन्द्र किंस्वित् सर्वमिदं जगत्॥[1]

युधिष्ठिर का उत्तर –

अतिथिः सर्वभूतानामग्निः सोमो गवामृतम्।

सनातनोऽमृतो धर्मो वायुः सर्वमिदं जगत्॥[2]

अर्थात् अग्नि समस्त प्राणियों का अतिथि है, गाय का दूध अमृत है, अविनाशी धर्म ही सनातन है, और वायु से ही सारा जगत् व्याप्त है।

महाभारत में गाय के दूध को अमृत कहा गया है। भारतवर्ष के विविध अंचलों में लोग सनातन से गाय को पालते आ रहे हैं। पहले गाय के लिए चर्वण भूमि की कोई कमी नहीं थी। गाय केवल एक पशु नहीं, मानव जीवन के सहयोगी अंग रूप में हमारे साथ सदियों से जुड़ी आई है। एक व्यक्ति के पास सैकड़ों गायें होती थी। गोवंश समृद्धि तथा अर्थ विनिमय के रूप में भी व्यवहृत की जाती थी।

---

[1] **महाभारत, वन पर्व**- 313 / 65

[2] **महाभारत, वन पर्व**- 313 / 66

पुनः यक्ष पूछता है–"इस लोक में श्रेष्ठ धर्म क्या है?"

कश्च धर्मः परो लोके कश्च धर्मः सदाफलः।

किं नयम्य न शोचन्ति कैश्च संधिर्न जीर्यते॥[3]

युधिष्ठिर कहते हैं–

आनृशंस्यं परो धर्मस्त्रयीधर्मः सदाफलः।

मनो यम्य न शोचन्ति संधिः सद्भिर्न जीर्यते॥[4]

अर्थात् हे यक्ष! लोक में दया श्रेष्ठ धर्म है, वेदोक्त धर्म नित्य फलवाला है, मन को वश में रखने से मनुष्य शोक नहीं करता और सत्पुरुषों के साथ की हुई मित्रता नष्ट नहीं होती।

दया से बढ़कर और कोई धर्म नहीं। मन को वश में करने से व्यक्ति विपरीत कार्य में प्रवृत्त नहीं होता और कृत्यजन्य दुःखों से भी बचता है। सत्पुरुषों के साथ की गई मित्रता कभी समाप्त नहीं होती। भारतवर्ष की यह परम्परा रही है कि यहाँ सत्पुरुषों की संगति सहज रूप से प्राप्त हो जाती है। आजकल सज्जन व्यक्ति का मिलना कठिन हो गया है। देश, काल और परिस्थिति के अनुसार जो अनुकूल व्यक्ति हो, उससे ही संगति करनी चाहिए। ऐसी संगति पथभ्रष्ट होने से सदा बचाती है।

यक्ष पुनः युधिष्ठिर से पूछता है-

"हे राजन! मनुष्य को किस वस्तु का त्याग करना चाहिए। शोक, अर्थ और सुख प्राप्ति के कारण क्या है?

किं नु हित्वा प्रियो भवति किं नु हित्वा न शोचति।

किं नु हित्वार्थवान् भवति किं नु हित्वा सुखी भवेत्॥[5]

इस पर युधिष्ठिर कहते हैं–

मानं हित्वा प्रियो भवति क्रोधं हित्वा न शोचति।

कामं हित्वार्थवान् भवति लोभं हित्वा सुखी भवेत्॥[6]

---

[3] महाभारत, वन पर्व- 313 / 75

[4] महाभारत, वन पर्व- 313 / 76

[5] महाभारत, वन पर्व- 313 / 77

[6] महाभारत, वन पर्व- 313 / 78

अर्थात् मान को त्याग देने पर मनुष्य प्रिय होता है, क्रोध को त्यागने पर शोक नहीं करता, काम को त्यागने पर अर्थवान होता है और लोभ को त्यागने पर सुखी होता है।

मान,क्रोध,काम और लोभ आत्मविजय हेतु अवरोधक तत्त्व है। 'मान' ऐसा आंतरिक शत्रु है जो व्यक्ति को अहंकार में डुबोये रहता है। यह श्रेष्टत्व का भ्रम उत्पन्न करता है, फलस्वरूप व्यक्ति दूसरों का सम्मान नहीं करता।

'क्रोध' मनुष्य का सबसे बड़ा शत्रु है। इस पर विजय पाये बिना व्यक्ति ऐसे कर्म कर बैठता है, जिसका पश्चाताप उसे जीवन भर होता है। यद्यपि क्रोध को वश में करना कठिन है, परन्तु निरन्तर अभ्यास और सत्संगति से यह संभव है।

काम के वशीभूत हो इतिहास में अनेक महान व्यक्तित्वों तथा राजाओं का पतन हुआ है। राजा भर्तृहरि, महर्षि विश्वामित्र,देवराज इन्द्र तक इससे अछूते नहीं रहे। अतः वेदव्यास मुनि ने काम विकार पर नियन्त्रण को आवश्यक बताया है। काम पर नियंत्रण कर संतुलित जीवन यापन करते हुए लक्ष्य की प्राप्ति सम्भव है।

लोभ समस्त पापों का मूल है। यह व्यक्ति को परस्त्री या परसंपत्ति की ओर आकृष्ट कर अधर्म की ओर ले जाता है, जिससे जीवन की गरिमा धूमिल हो जाती है। इसलिए लोभ से सर्वथा बचना चाहिए।

वेदव्यास मुनि द्वारा वर्णित इस श्लोक में इन चारों विकारों के त्यागने का संदेश है। जो व्यक्ति इन्हें वश में कर लेता है,उसके जीवन में विद्या के साथ लक्ष्मी का स्थायी वास होता है। वह सदा धर्मपथ पर अग्रसर रहते हुए सुख, समृद्धि और शान्ति प्राप्त करता है।

यक्ष की जिज्ञासा यहीं समाप्त नहीं होती। वह युधिष्ठिर से पूछता है- पुरुष किस प्रकार मरा हुआ कहा जाता है ? राष्ट्र, श्राद्ध और यज्ञ कैसे नष्ट हो जाता है?

मृतः कथं स्यात् पुरुषः कथं राष्ट्रं मृतं भवेत् ।
श्राद्धं मृतं कथं वा स्यात् कथं यज्ञो मृतो भवेत्॥[7]

युधिष्ठिर यक्ष के इस प्रश्न का उत्तर देते हुए कहते हैं-

मृतो दरिद्रः पुरुषो मृतं राष्ट्रमराजकम्।

[7] महाभारत, वन पर्व- 313 / 83

मृतमश्रोत्रियं श्राद्धं मृतो यज्ञस्त्वदक्षिणः॥[8]

दरिद्र पुरुष मरे हुए के समान होता है, बिना राजा का राज्य मर जाता है अर्थात् नष्ट हो जाता है। श्रोत्रीय ब्राह्मणके बिना श्राद्ध मृत हो जाता है और बिना दक्षिणा का यज्ञ नष्ट हो जाता है।

महर्षि व्यास की दृष्टि में दरिद्रता व्यक्ति के जीवन को मृतवत् बनाती है। दरिद्रता से बाहर आने के लिए पुरुषार्थ जरूरी है। यदि सच्चे मन से व्यक्ति पुरुषार्थ करें तो वह निश्चित रूप से अपनी दरिद्रता को दूर कर सकता है और इसका प्रत्यक्ष उदाहरण आज समाज में हम पुरुषार्थ करते लोगों के बीच देख सकते हैं।

फिर यक्ष ने पूछा- दिशा क्या है? जल क्या है? अन्न क्या है? विष क्या है? और श्राद्ध का समय क्या है? यह बताओ। इसके बाद जल पीकर इन्हें ले जाओ ।

का दिक् किमुदकं प्रोक्तं किमन्नं किं च वै विषम्।

श्राद्धस्य कालमाख्याहि ततः पिब हरस्व च॥[9]

धर्मराज युधिष्ठिर यक्ष के इस प्रश्न का उत्तर देते हुए कहते हैं-

सन्तो दिग् जलमाकाशं गौरन्नं प्रार्थना विषम् ।

श्राद्धस्य ब्राह्मणः कालः कथं वा यक्ष मन्यसे ॥[10]

सत्पुरुष दिशा हैं, आकाश जल है, पृथ्वी अन्न है, कामना विष है और ब्राह्मण ही श्राद्ध का समय है।

सत्पुरुषों के जीवन जीने का मार्ग ही सच्चा मार्ग है। पृथ्वी हमें अन्न देती है, इसलिए पृथ्वी का संरक्षण आवश्यक है। किसी भी वस्तु की कामना उसे सर्वदा अशान्त किये रहती है। महाभारत के अनुसार कामना विषतुल्य है । जैसे जहर से सदा दूर रहना चाहिए, उसी तरह व्यक्ति को कामनाओं के वश में नहीं आना चाहिए। जीवन में लक्ष्य आवश्यक है। लक्ष्य के लिए पुरुषार्थ जरूरी है, लेकिन लक्ष्य को पाने के लिए सर्वदा कामनाओं में जीना ठीक नहीं।

यक्ष आगे पूछता है-

तप क्या है ? दम किसे कहा गया है ? क्षमा क्या है ? और लज्जा किसे कहते हैं ।

तपः किं लक्षणं प्रोक्तं को दमश्च प्रकीर्तितः ।

---

[8] महाभारत, वन पर्व- 313 / 84

[9] महाभारत, वन पर्व- 313 / 85

[10] महाभारत, वन पर्व- 313 / 86

क्षमा च का परा प्रोक्ता का च ह्रीः परिकीर्तिता॥[11]

धर्मराज युधिष्ठिर का उत्तर -

तपः स्वधर्मवर्तित्वं मनसो दमनं दमः ।

क्षमा द्वन्द्वसहिष्णुत्वं ह्रीरकार्यनिवर्तनम् ॥[12]

अपने धर्म में तत्पर रहना तप है। मन के दमन का ही नाम दम है। सर्दी-गर्मी आदि द्वन्द्वों को सहन करना क्षमा है तथा न करने योग्य काम परहेज लज्जा है ।

यदि व्यक्ति स्वाभाविक स्थिति में होता है, तो उसका मन अकरणीय कार्यों को करने से उसे प्रथमत: रोकता है। मन का विरत होना ही लज्जा है। अपने कार्य में तत्पर रहना है श्रेष्ठ तप है। महर्षि वेदव्यास के अनुसार सर्दी गर्मी, सुख-दुःख ,उत्थान पतन जैसी परिस्थितियों में अपने आप को संयमित रखना और दुःखों को सहन करना ही क्षमा है।

राजन् ! मोह किसे कहते हैं ? मान क्या है ? आलस्य किसे जानना चाहिये ? और शोक किसे कहते हैं?

को मोहः प्रोच्यते राजन् कश्च मानः प्रकीर्तितः ।

किमालस्यं च विज्ञेयं कश्च शोकः प्रकीर्तितः ॥[13]

यक्ष के इस प्रश्न के उत्तर में युधिष्ठिर कहते हैं-

मोहो हि धर्ममूढत्वं मानस्त्वात्माभिमानिता ।

धर्मनिष्क्रियताऽऽलस्यं शोकस्त्वज्ञानमुच्यते ॥[14]

धर्म मूढ़ता ही मोह है, आत्माभिमान ही मान है, धर्म का पालन न करना आलस्य है और अज्ञान को ही शोक कहते हैं।

लघु शब्दों में कितने गंभीर विषयों का निरूपण यहाँ किया गया है। एक-एक शब्द अर्थ गाम्भीर्य को लिए है। स्वयं की बुद्धि, ज्ञान, ऐश्वर्य पर अभिमान कदापि नहीं करना चाहिए। शोक करना अज्ञानता

---

[11] महाभारत, वन पर्व- 313 / 87

[12] महाभारत, वन पर्व- 313 / 88

[13] महाभारत, वन पर्व- 313 / 93

[14] महाभारत, वन पर्व- 313 / 94

का प्रतीक है। जब पूरा संसार नश्वर है, अनश्वर केवल ब्रह्म है, तो हम किसी वस्तु या व्यक्ति के खो जाने पर अतिशय दुःख क्यों करते हैं। यह दुःख व्यक्त करना अज्ञानता का ही सूचक है।

पुनः यक्ष युधिष्ठिर से पूछता है। हे महाराज ! आप बताएँ - अहंकार किसे कहते हैं, दम्भ क्या है, परम देवता कौन है और पैशुन्य किसका नाम है ?

कोऽहङ्कार इति प्रोक्तः कश्च दम्भः प्रकीर्तितः ।
किं तद् दैवं परं प्रोक्तं किं तत् पैशुन्यमुच्यते ॥[15]

युधिष्ठिर चिन्तन कर यक्ष को उत्तर देते हैं-

महाज्ञानमहङ्कारो दम्भो धर्मो ध्वजोच्छ्रयः ।
दैवं दानफलं प्रोक्तं पैशुन्यं परदूषणम्॥[16]

अज्ञान अहंकार है, अपने को बड़ा धर्मात्मा सिद्ध करना दम्भ है, दान का फल दैव कहलाता है और दूसरों पर दोष मढ़ना पैशुन्य (चुगली) है।

जो व्यक्ति अहंकार में चूर रहता है, समझे वह महान अज्ञानी है। जो अपने आप को धर्मात्मा बताता है, समझिए वह दम्भी है। दान का फल दैव है और सम्पूर्ण तत्वों पर विवेचना किए बिना दूसरों पर दोष मढ़ना सबसे बड़ा का दुर्गुण है। उच्च पदस्थ लोगों में भी ये दोष प्राय: देखने को मिलते हैं।

यक्ष पूछता है राजन् ! कुल, आचार, स्वाध्याय और शास्त्रश्रवण-इनमें से किसके द्वारा ब्राह्मणत्व सिद्ध होता है ? यह बात निश्चय करके बताओ।

राजन् कुलेन वृत्तेन स्वाध्यायेन श्रुतेन वा।
ब्राह्मण्यं केन भवति प्रब्रूह्येतत् सुनिश्चितम् ॥[17]

इस प्रश्न के उत्तर में युधिष्ठिर सोच विचार कर कहते हैं-

शृणु यक्ष कुलं तात न स्वाध्यायो न च श्रुतम् ।
कारणं हि द्विजत्वे च वृत्तमेव न संशयः ॥[18]

---

[15] महाभारत, वन पर्व- 313 / 99

[16] महाभारत, वन पर्व- 313 / 100

[17] महाभारत, वन पर्व- 313 / 107

[18] महाभारत, वन पर्व- 313 /108

तात यक्ष ! सुनो न तो ब्राह्मणत्व का कारण कुल है, न स्वाध्याय और न शास्त्रश्रवण । ब्राह्मणत्व का हेतु तो आचार ही है, इसमें संशय नहीं। जिसका सदाचार अक्षुण्ण है, उसका ब्राह्मणत्व भी बना हुआ है और जिसका आचार नष्ट हो गया, वह तो स्वयं भी नष्ट हो गया।

पठकाः पाठकाश्चैव ये चान्ये शास्त्रचिन्तकाः ।

सर्वे व्यसनिनो मूर्खा यः क्रियावान् स पण्डितः॥[19]

पढ़नेवाले, पढ़ानेवाले तथा शास्त्रका विचार करनेवाले-ये सब तो व्यसनी और मूर्ख ही हैं। पण्डित तो वही है, जो अपने (शास्त्रोक्त) कर्तव्यका पालन करता है।

और भी-

चतुर्वेदोऽपि दुर्वृत्तः स शूद्रादतिरिच्यते ।

योऽग्निहोत्रपरोदान्तः स ब्राह्मण इति स्मृतः॥[20]

चारों वेद पढ़ा होने पर भी जो दुराचारी है, वह शूद्र से भी अधम है। जो नित्य अग्निहोत्र में तत्पर और जितेन्द्रिय है, वही 'ब्राह्मण' है।

चारों वर्णों में क्यों ब्राह्मण श्रेष्ठ है, इस विषय को यहाँ वेदव्यास कहते हैं कि ब्रह्मत्व स्वाध्याय और आचार से ही सुरक्षित है। आचार की व्याख्या शास्त्रों में विस्तार से की गई है। खलकर्म से व्यक्ति को दूर रहना ही आचार है। परनिन्दा, मिथ्यवादिता, हिंसा, क्रोध, लोभ, मोह, ईर्ष्या-द्वेषादि जैसे खलकर्मों से ब्राह्मण को सर्वथा परिहार करना चाहिए।

महाभारतकार व्यासदेव करते हैं कि केवल स्वाध्याय, उच्च कुल और शास्त्र-श्रवण करने से ब्राह्मण न तो सिद्ध होता है और न ही स्थापित। केवल जन्म लेने मात्र से, कुप्रवृत्तियों के रहते जो ब्राह्मण अपने आप को उच्च होने का दम्भ भरता है, उसको न तो शास्त्र स्वीकारता है और न ही समाज। अतः बदले हुए सामाजिक परिवेश में ब्राह्मण को सर्वाधिक चुनौती शास्त्रविहित कर्मों के अनुसार जीवन यापन करने की है। यदि वह शास्त्र के अनुसार जीवन यापन करता है, तो निश्चित रूप से उसे समाज स्वीकार करेगा।

---

[19] महाभारत, वन पर्व- 313 / 110

[20] महाभारत, वन पर्व- 313 / 111

पुनः यक्ष ने चार गम्भीर प्रश्नों को युधिष्ठिर के समक्ष रखा - सुखी कौन है? आश्चर्य क्या है? मार्ग क्या है और वार्ता क्या है? मेरे इन चार प्रश्नों का उत्तर देकर जल पीओ ।

को मोदते किमाश्चर्यं कः पन्थाः का च वार्तिका।

ममैतांश्चतुरः प्रश्नान् कथयित्वा जलं पिब ॥[21]

युधिष्ठिर द्वारा दिये गये ये उत्तर स्वयं महर्षि व्यास के हैं।

सुखी-

पञ्चमेऽहनि षष्ठे वा शाकं पचति स्वे गृहे।

अनृणी चाप्रवासी च स वारिचर मोदते ॥[22]

जिस पुरुष पर ऋण नहीं और जो परदेश में नहीं है, वह भले ही पाँचवें या छठे दिन अपने घरके भीतर साग-पात ही पकाकर खाता हो, तो भी वही सुखी है।

आश्चर्य-

अहन्यहनि भूतानि गच्छन्तीह यमालयम् ।

शेषाः स्थावरमिच्छन्ति किमाश्चर्यमतः परम् ॥[23]

संसार से प्रतिदिन प्राणी यमलोकमें जा रहे हैं; फिर भी जो बचे हुए हैं, वे सर्वदा जीने की इच्छा करते हैं; इससे बढ़कर आश्चर्य और क्या होगा ?

मार्ग -

तर्कोऽप्रतिष्ठः श्रुतयो विभिन्ना नैको ऋषिर्यस्य मतं प्रमाणम्।

धर्मस्य तत्त्वं निहितं गुहायां महाजनो येन गतः स पन्थाः॥[24]

---

[21] महाभारत, वन पर्व- 313 / 114

[22] महाभारत, वन पर्व- 313 / 115

[23] महाभारत, वन पर्व- 313 / 116

[24] महाभारत, वन पर्व- 313 / 117

तर्क कहीं एक साथ प्रतिष्ठित नहीं है, श्रुतियाँ भिन्न-भिन्न हैं, कोई एक ऋषि नहीं, जिसका मत प्रमाण माना जाय तथा धर्म का तत्त्व अत्यन्य गूढ़ है; ऐसे में जिस पथ का अनुगमन महापुरुष करते हैं, वही मार्ग है।

वार्ता-

अस्मिन् महामोहमये कटाहे सूर्याग्निना रात्रिदिवेन्धनेन।

मासर्तुदर्वीपरिघट्टनेन भूतानि कालः पचतीति वार्ता ॥[25]

इस महामोहरूपी बड़े कड़ाही में सभी जीव काल मास और ऋतुरूपी करछी से उलट-पलटकर सूर्यरूप अग्नि और रात-दिनरूप ईंधन के द्वारा पकाये जा रहे हैं, यही वार्ता है।

यक्ष का यह अंतिम प्रश्न सभी मनुष्यों के लिए है। जब प्रतिदिन संसार में लोग जन्म ले रहे हैं और मृत्यु को प्राप्त हो रहे हैं और फिर भी प्राणी जीने की इच्छा करता है, इससे बढ़कर आश्चर्य और क्या हो सकता है। जीवन में कई ऐसे मार्ग हैं, जिसमें चलने में संशय की स्थिति उत्पन्न होती है,तब वहाँ अपनी अंतरात्मा की आवाज सुननी चाहिए या फिर आपको गुरुजनों, सज्जनों के बताए मार्ग पर चलना चाहिए। इसीलिए कहा गया है -

महाजनो येन गत: स पन्था:।[26]

यदि आत्म चिन्तन कर देखें तो सच्चा सुख - प्यासे को जल पिलाने,भूखे को अन्य खिलाने,दीन दुःखी को समय पर सहायता करने, द्वार पर आए भिक्षुक को दान देने में है।

ऋग्वेद में कहा गया है। एक वृक्ष पर दो पक्षी बैठे हैं। एक फल खा रहा है, दूसरा खाते हुए पक्षी को निहार कर प्रसन्न हो रहा है। जो फल खा रहा है, वह जीव है। दूसरा पक्षी जो पल खाते हुए को निहार रहा है, वह ब्रहम है। यही ब्रहम और जीव का अन्तर्सम्बन्ध है।

द्वा सुपर्णा सयुजा सखाया समानं वृक्षं परिषस्वजाते।

---

[25] **महाभारत, वन पर्व-** 313 /118

[26] **महाभारत, वन पर्व-** 313 / 117

तयोरन्यः पिप्पलं स्वाद्वत्त्यनश्नन्नन्यो अभिचाकशीति॥[27]

धन की आसक्ति में खो जाना यह अज्ञानता है। ऐश्वर्य का उपभोग करते हुए उसमें लिप्त नहीं होने की बात कही गई है। ईशावास्योपनिषद् का प्रथम मन्त्र द्रष्टतव्य है-

तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा मा गृधः कस्यस्विद्धनम्॥[28]

अन्त में यक्ष ने पूछा - हे परंतप ! तुमने मेरे सब प्रश्नोंके उत्तर ठीक-ठीक दिया है। अब तुम पुरुष की व्याख्या कर दो और यह बताओ कि सबसे बड़ा धनी कौन है?

व्याख्याता मे त्वया प्रश्ना याथातथ्यं परंतप ।

पुरुषं त्विदानीं व्याख्याहि यश्च सर्वधनी नरः ॥[29]

युधिष्ठिर यक्ष के अंतिम प्रश्न का उत्तर देते हुए कहते हैं -

दिवं स्पृशति भूमिं च शब्दः पुण्येन कर्मणा।

यावत् स शब्दो भवति तावत् पुरुष उच्यते ॥[30]

तुल्ये प्रियाप्रिये यस्य सुखदुःखे तथैव च।

अतीतानागते चोभे स वै सर्वधनी नरः ॥[31]

भूतभव्यभविष्येषु निःस्पृहः शान्तमानसः ।

सुप्रसन्नः सदा योगी स वै सर्वधनीश्वरः ॥[32]

जिस व्यक्ति के पुण्यकर्मों की कीर्ति का शब्द जब तक स्वर्ग और भूमि को स्पर्श करता है, तबतक वह पुरुष कहलाता है। जो मनुष्य प्रिय-अप्रिय, सुख-दुःख और भूत-भविष्यत्-इन द्वन्द्वों में सम है, वही

---

27 ऋग्वेद 1/164/20

28 ईशावास्योपनिषद् 1

29 महाभारत, वन पर्व- 313 / 119

30 महाभारत, वन पर्व- 313 / 120

31 महाभारत, वन पर्व- 313 / 121

32 महाभारत, वन पर्व- 313 / 121

सबसे बड़ा धनी है और जो भूत, वर्तमान और भविष्य में निःस्पृह, शान्तचित्त, सुप्रसन्न और योगयुक्त है, वही सब धनियों का स्वामी है ।

यक्ष-युधिष्ठिर वार्ता के पूरे प्रश्नोत्तर पर्व का विश्लेषण करने के बाद ऐसा प्रतीत होता है कि महाभारत की कथा में यक्ष का प्रसङ्ग महर्षि वेदव्यास द्वारा मानवों को कर्तव्य, धर्म और आचरण की यथार्थ शिक्षा देने के लिए ही कल्पित किया गया है। इस प्रसङ्ग में यक्ष द्वारा जो प्रश्न पूछे गए हैं, वे सभी अपने आप में विशेष महत्व रखते हैं। सबसे महत्वपूर्ण है,उन प्रश्नों का संस्कृत भाषा के छन्दोंबद्ध श्लोकों के माध्यम से,अति संक्षेप में युधिष्ठिर द्वारा प्रदत्त उत्तर। यह प्रत्युत्तर हमें विचार करने पर बाध्य करता है कि महर्षि वेदव्यास का चिन्तन और ज्ञान कितना समृद्ध था।

यक्ष-युधिष्ठिर वार्ता के प्रश्न जीवन जीने के मार्ग है, कर्तव्य-अकर्तव्य का व्यावहारिक ज्ञान हैं; सज्जनों और मूर्खों की पहचान है; मूर्खों और पण्डितों में पार्थक्य का बोध तथा नश्वर और अनश्वर का सम्यक् ज्ञान है। यदि कोई व्यक्ति इस वार्ता को अच्छी तरह श्रवण करे,उस पर चिन्तन करे, उसके तत्त्व और मर्म को ढूंढ़ने का प्रयास करे, तो निश्चित रूप से भारतीय संस्कृति, सनातन धर्म और भारतीय ज्ञान परम्परा की यथार्थ समझ उसमें विकसित होगी।

यदि ऐसे ज्ञानप्रद प्रसंगों को केवल हम पढ़ते हैं और उसे अपने जीवन में थोड़ा भी पालन नहीं करते, तो 'चतुर्णां पंडितानां मूर्खाणां' कथा वाली स्थिति उत्पन्न हो जाएगी। अतः वेदव्यास ने महाभारत के वनपर्व में इस विशेष आख्यान का जो वर्णन किया है, उसके मूलभूत तत्त्वों को अपने व्यवहार में उतारने की आवश्यकता है। और यदि हम ऐसा थोड़ा भी कर पाते हैं, तो निश्चित रूप से हमारा जीवन आदर्श सिद्ध होगा।

सन्दर्भ ग्रन्थसूची-

- **महाभारत**, **द्वितीय खण्ड**, **गीता प्रेस गोरक्षपुर।**
- **महाभारत**- **पूर्णप्रज्ञ दास द्वारा पुनर्लिखित**, **ट्रेबेलिं संकीर्तन पार्टि**, 2025
- **महाभारत कथा-ऐतिहासिक और सांस्कृतिक विवेचन**, **सुभाष विद्यालंकार**, **प्रतिभा प्रकाशन**, 2015
- **श्रीमद्भगवद्गीता**,**गीताप्रेस गोरक्षपुर**, 2001
- **ईशादि नौ उपनिषद्**, **गीताप्रेस**, **गोरक्षपुर**, 2003
- **वैदिक संकलन**, **अध्यापक तारकनाथ अधिकारी एवं समीर कुमार मण्डल**, **संस्कृत बुक डिपो**, 2020
- **संस्कृत सुकवि समीक्षा**, **बलदेव उपाध्याय**,**चौखम्बा विद्याभवन**, **वाराणसी**, 1987
- **संस्कृत-कवि-दर्शन**, **डॉ**. **भोला शङ्कर व्यास**, **चौखम्बा विद्याभवन**, **वाराणसी**, 2004.
- **संस्कृत साहित्येर इतिहास**, **देवकुमार दास**, **सदेश**,**श्रीबलराम प्रकाशनी**, **कलकाता**, 1414 **वं**.
- **आधुनिक संस्कृत साहित्य संग्रह**, **डॉ**. **राजमङ्गल यादव**, **जे**. **पी**. **पब्लिशिंग हाउस**, **दिल्ली।**